विज्ञान के सितारे और शेरपा

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

प्रोफेसर खड्ग सिंह वाल्दिया एक मशहूर भू-वैज्ञानिक हैं। वे बैंगलुरु के जवाहरलाल नेहरु सेंटर में काम करते हैं। *करंट साइन्स* के 25 फरवरी 2012 के अंक में उनका आलेख यह पीड़ा व्यक्त करता है कि कार्यस्थल पर काम करने वाले भूगर्भ वैज्ञानिकों को भूगर्भ शास्त्र के अकादमिक जगत की 'मुख्यधारा' में कोई मान्यता प्रदान नहीं की जाती। इस क्षेत्र में जो ऊंच-नीच है, उसमें ऐसे मैदानी भूगर्भ वैज्ञानिक सबसे निचली पायदान पर होते हैं। वाल्दिया की पीड़ा यह है कि ये लोग ही देश की खनिज व जल संपदा के सच्चे खोजी हैं मगर फिर भी इनका कोई सम्मान नहीं है, कोई इनका गुणगान नहीं करता, कोई इनके लिए आंसू नहीं बहाता। वाल्दिया के मुताबिक यही मैदानी भूगर्भ वैज्ञानिक होने की त्रासदी है। स्वाभाविक रूप से उनके इस आलेख ने साथी भूगर्भविदों और अन्य वैज्ञानिकों की तीखी प्रतिक्रियाएं आकर्षित की हैं।

दरअसल, वाल्दिया जो कुछ कह रहे हैं वह विज्ञान की अन्य शाखाओं के अलावा कई अन्य विषयों के लिए भी सही है। आम तौर पर शोधकर्ताओं के किसी भी समूह में एक मुखिया होता है, उसके सहायक होते हैं, विद्यार्थी होते हैं और तकनीकी सहायक होते हैं। और देखा जाए तो परियोजना की प्रगति के लिए बहुत सारा 'गंदा' और उबाऊ काम करना होता है जिसे इसमें से आखरी समूह करता है।

इसके बावजूद उन्हें सबसे कम वेतन मिलता है, और आम तौर पर उन्हें शोध पत्र में लेखकों के रूप में शामिल भी नहीं किया जाता, और न तो उन्हें कोई पुरस्कार मिलता है, न अकादमियों की सदस्यता वगैरह मिलती है। इस मामले में यहां एक अनकही जाति व्यवस्था लागू रहती है।

वाल्दिया ने ऐसे कई उदाहरण दिए हैं जब ऐसे मैदानी वैज्ञानिकों ने उल्लेखनीय योगदान दिए हैं। जब विशेषज्ञों ने देश के कई इलाकों को बंजर घोषित कर दिया था, तब इन्हीं मैदानी भू-वैज्ञानिकों ने समुद्रों में तट से दूर (ऑफशोर) 339 तथा तटवर्ती क्षेत्रों (ऑनशोर) में 217 ऐसे स्थान खोज निकाले थे जो तेल व प्राकृतिक गैस के समृद्ध भंडार हैं। कुल मिलाकर इन भंडारों में 650 अरब टन तेल व प्राकृतिक गैस मौजूद है। ये मैदानी भू-वैज्ञानिक संरचना भूगर्भ विज्ञान, तलछटीकरण विज्ञान, पुरा-भूविज्ञान व अन्य विषयों में विशेषज्ञता रखते थे।

अभी हाल ही में, कृष्णा-गोदावरी घाटी में पलाकोल्लु-पसरलापुडी क्षेत्र में 3.4 अरब टन क्षमता वाले तेल व गैस भंडार खोजे गए हैं। इसके अलावा, राजस्थान के जैसलमेर इलाके में भी तेल भंडार खोजे गए हैं।

यही बात युरेनियम भंडारों के संदर्भ में नज़र आती है। युरेनियम भंडारों की खोज हाल ही में परमाणविक खनिज निदेशालय द्वारा की गई है। इसके बावजूद भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण, तेल व प्राकृतिक गैस आयोग अथवा परमाणविक खनिज निदेशालय के वैज्ञानिकों/इंजीनियर्स को मान्यता या सम्मान नहीं मिला है जबकि प्रयोगशालाओं, संस्थानों में काम कर रहे और शोध पत्र प्रकाशित कर रहे वैज्ञानिकों को भरपूर मान्यता मिलती है।

वाल्दिया के शब्दों में: "ये लोग घर और प्रयोगशालाओं के आराम से दूर, कई बार कठिन व खतरनाक परिस्थितियों में, महीनों बिना रुके काम करते हैं। मगर उनकी खोजों को लगभग ऐसा माना जाता है कि जैसे किसी अकुशल मज़दूर ने पहले से पड़ी कोई बहुमूल्य चीज़ उठा ली हो।"

वाल्दिया आगे उस 'विकट विडंबना' की बात करते हैं जब भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण का निर्देशन किसी क्षेत्र-विशेषज्ञ द्वारा नहीं बल्कि आईएएस अधिकारी द्वारा किया जाता है। यही हालत हिमालयी पर्यावरण व विकास संस्थान के अध्यक्ष की भी है। वाल्दिया पूछते हैं, "मुझे नहीं पता कि यदि सीएसआईआर, आईसीएमआर, आईसीएआर जैसी संस्था का अध्यक्ष किसी आईएएस अधिकारी को बना दिया जाए तो वैज्ञानिकों की क्या प्रतिक्रिया होगी।"

वाल्दिया का आलेख न सिर्फ वैज्ञानिक समुदाय बल्कि नीतिकारों के लिए भी एक चेतावनी है कि मैदानी अमले को उचित मान्यता मिलनी चाहिए। ऐसा नहीं हो सकता कि सारा आदर-सम्मान तो अधिकारियों को मिले और मैदानी अमले के साथ 'शेरपा' जैसा सलूक होता रहे।

डॉ. रिक ओडोनेल ने टेक्सास विश्वविद्यालय की शिक्षा नीति का विश्लेषण करते हुए अकादमिक शोध का वर्गीकरण पांच समूहों में किया हैः डॉजर्स, कोस्टर्स, शेरपा, पायोनियर्स, और सितारे। वे कहते हैंः "शेरपा वे लोग हैं जो एक सख्त टाइम टेबल के मुताबिक अधिकांश शिक्षण कार्य करते हैं, और इन्हीं ने कई सारे ऊंचे चढ़ने वाले लोगों को उनकी प्रतिष्ठा बनाने में मदद की है।"

इस अजीबोगरीब परिस्थिति को और विडंबनापूर्ण बनाते हुए सरकार ने अपनी नीतियां बदली हैं और नई नीतियों के तहत खनन, तेल व पानी संसाधनों की खोज के काम में निजी पार्टियों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है।

वाल्दिया बताते हैं कि इससे पहले राष्ट्रीय खनिज विकास निगम, राष्ट्रीय कोयला विकास निगम, और भारतीय तांबा निगम जैसे स्वायत्त सरकारी उद्यम संसाधन उपलब्ध कराने में अहम भूमिका निभाते थे। ये उद्यम राष्ट्रीय (व तर्कसंगत) खनिज नीतियों का पालन करते थे, वैज्ञानिक रूप से उपयुक्त खनन के नियमों का ध्यान रखते थे और पर्यावरण की रक्षा करते थे।

निजीकरण के पक्ष में नीतिगत परिवर्तनों के चलते 'धरती के बहुमूल्य संसाधनों की बेलगाम लूट, राष्ट्रीय संपदा की निर्लज्ज लूट और विस्थापितों व अन्य प्रतिकूल प्रभावित लोगों को लाभों से वंचित करने' जैसे नज़ारे सामने आ रहे हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***